सफरनामाः एक बाल अखबार क

महेश झरबड़े

नवीन हाईस्कूल 25वीं बटालियन, भोपाल में प्राथमिक शाला के बच्चों के साथ काम करते, इधर-उधर की बातचीत सुनते-सुनाते, बच्चों के साथ अलग-अलग पालकों से मिलते-मिलाते दो माह बीत चुके थे। इस दौर में मेरी बच्चों से अच्छी खासी दोस्ती हो चुकी थी। दरअसल, बच्चों के साथ घूमते हुए चीज़ों को देखना, उनका अवलोकन करना, साथ बैठकर अलग-अलग बच्चों से उनकी कॉलोनी-बस्ती की खबरें सुनना और अलग-अलग लोगों, स्थानों के बारे में बच्चों की राय जानना 'बाल अखबार' की पूर्व तैयारी का एक बड़ा हिस्सा था। साथ ही इस पूरी प्रक्रिया का एक दूसरा महत्वपूर्ण उद्देश्य था, बच्चों के बीच ऐसा माहौल तैयार करना

बाल अखबार बच्चों को स्कूली पाठ्यक्रम से इतर अपना कौशल दिखाने, अपने मन की बातें और मनोभावों को व्यक्त करने की स्वतंत्रता और जगह उपलब्ध कराते हैं। खास बात यह है कि इसमें उन्हें मूल्यांकन का खतरा भी नहीं रहता। बाल अखबार के लिए काम करते हुए, बच्चों में समूह में काम करने की आदत और नेतृत्व क्षमता का विकास होता है। इस प्रयास से भाषा की समझ और उस पर पकड़ भी बेहतर बनती है। इस गतिविधि में कुछ और पहलू जोड़ता है यह लेख।

जिसमें वे खुद अपने मन से कुछ लिखने को तैयार हो सकें।

निकला पहला बाल अखबार

इस गुपचुप आन्तरिक तैयारी के बाद एक गोल घेरा बनाकर 'समाचार पत्र' के बारे में हमारी बातचीत शुरू हुई।

मैंने पूछा, "आप सबने कौन-कौन-से अखबार देखे हैं?"

बच्चे - दैनिक भास्कर, नवभारत, दैनिक जागरण, सांध्य प्रकाश, पत्रिका, राज एक्सप्रेस - बस इतने ही देखे हैं?

मैं - अखबार निकालने (छापने) की क्या ज़रूरत है?

- उससे हमें नई-नई जानकारियाँ मिलती हैं।
- उसमें लड़ाई-झगड़े की बात पता चलती है।
- टी.वी. में कौन-सी फिल्म आएगी, मालूम हो जाता है।
- पहेलियाँ और चुटकुले भी तो होते हैं।

एक-एक करके बच्चों ने सुझाव जोड़े और यह सूची बढ़ती गई।

इसी तरह अन्य बिन्दुओं पर भी विस्तार से चर्चा के बाद मैंने पूछा, "क्या हम सब भी अपना बाल अखबार निकाल सकते हैं?" सभी ने सहमति जताई।

"उस अखबार का नाम क्या होगा? उसमें हम क्या-क्या लिखेंगे?"

अखबार के नाम पर सहमति नहीं बन पाई। लेकिन 'क्या लिखेंगे' बिन्दु पर बच्चों ने कविताएँ, चुटकुले, कहानी आदि लिखना तय किया और बच्चों ने पहला अखबार निकाला 'गुनगुन'।

इसके बाद 15 दिन के अन्तराल में एक अखबार निकला 'चुटकुला भास्कर' और फिर 'गुनगुन कविताएँ'। इन अखबारों में बच्चों की लिखी कविताएँ, कहानियाँ, घटनाएँ और चुटकुले शामिल थे। इन अखबारों को स्कूल की बाहरी दीवारों पर लगाया गया, शाला शिक्षकों को दिखाया गया और कुछ पालकों को भी बताया गया।

अखबार के प्रति अपनापन

कुछ दिनों बाद चुनाव के चलते दीवारों से पोस्टर और अखबार हटा दिए गए। बच्चों ने दोबारा अखबार नहीं लगाए और न ही नए अखबार बनाए। कुछ अखबार फट गए और कुछ फाड़ दिए गए। जानकारी मिली कि अखबारों को फाड़ने में बच्चों की भी हिस्सेदारी थी।

इस पूरी घटना से मेरे दिमाग में दो तरह के सवाल घुमड़ रहे थे -

- "ऐसा क्या किया जाए कि बच्चे बाल अखबार से अपनापन महसूस करते हुए उसकी हिफाज़त करने लगें।"
- "क्या करूँ जिससे बच्चे अपना अखबार खुद ही निकालने लगें।"

इन समस्याओं को ध्यान में रखते हुए मैंने दोबारा कोशिश की और एक अखबार निकला जिसमें बच्चों ने अपने-अपने दोस्तों के बारे में लिखा और इसका नाम रखा 'दोस्ती भास्कर।'

बच्चों में अखबार के प्रति अपनापन हो, इसके लिए थोड़े ज़्यादा प्रयास करते हुए मैंने इस अखबार को कक्षा 8वीं, 9वीं, 10वीं के बच्चों को दिखाया, साथ ही कक्षा शिक्षकों व प्राचार्य को भी दिखाया।

अन्य बच्चों, शिक्षकों व प्राचार्य द्वारा अखबार के बारे में की गई टिप्पणियाँ मैंने जाकर बच्चों (अखबार टीम) को सुनाईं।

अलग-अलग आयु वर्ग के बच्चों और शिक्षकों से मिली प्रतिक्रियाओं ने बच्चों में खुशी और उत्साह का संचार किया। पहली बार मैंने उनमें 'यह

हमारा अखबार है' की भावना महसूस की।

चला जो चिट्ठियों का सिलसिला

इसी बीच मैं अपने सवालों को सुलझाने के लिए मौके तो तलाश ही रहा था, तभी मुझे प्राथमिक शाला सेवनिया गोंड में बच्चों से अखबार निकलवाने का मौका मिला।

मैंने 25वीं बटालियन के बच्चों का 'दोस्ती भास्कर' अखबार साथ रख लिया। नए स्कूल के बच्चों से बाल अखबार पर लम्बी बातचीत हुई और फिर उन्हें बच्चों द्वारा बनाया अखबार 'दोस्ती भास्कर' दिखाया। नए स्कूल के बच्चों को 'दोस्ती भास्कर' पढ़कर अच्छा लगा और उन्होंने 'हमारी दोस्ती' शीर्षक पर अपने दोस्तों के बारे में लिखकर अपना पहला बाल अखबार बनाया।

बाद में मैंने यहाँ के बच्चों से कहा, "क्या आप में से कोई भी 'दोस्ती भास्कर' कैसा लगा, इस बारे में कुछ लिखकर दे सकता है?" शालिनी शास्त्री

और रागिनी गौर ने मुझे दो चिट्ठियाँ लिखकर दीं।

मेरा नाम रागिनी है। मैं पाँचवीं में पढ़ती हूँ और सेवनिया गोंड में रहती हूँ। हमें आपका अखबार बहुत अच्छा लगा। आप सबने अपने-अपने दोस्तों और टीचर के बारे में जो लिखा है उसको पढ़कर बहुत अच्छा लगा। आपके अखबार के चित्र भी अच्छे लगे।

लेकिन निकिता ने अपनी सहेली प्रिया के चेहरे पर पेन से गोदागादी कर दी, वह हमें अच्छा नहीं लगा।

आज हमने भी एक अखबार निकाला है, उसका नाम है 'हमारी दोस्ती'।

रागिनी गौर

ऐसी ही चिट्ठी शालिनी शास्त्री ने भी लिखी।

अगले दिन जब मैं 25वीं बटालियन स्कूल पहुँचा और बच्चों को सेवनिया गोंड स्कूल के बच्चों से हुई चर्चा के बारे में बताया और उनकी दी गई चिट्ठियाँ पढ़कर सुनाईं तो वे खुशी से झूम उठे। उन्हें बहुत अच्छा लगा।

उन दिनों मैं 25वीं बटालियन और नयाबसेरा, दो स्कूलों में बच्चों के साथ काम करता था

चूँकि, 25वीं बटालियन में अखबार की शुरुआत हो चुकी थी और अब नयाबसेरा की बारी थी इसलिए मैंने

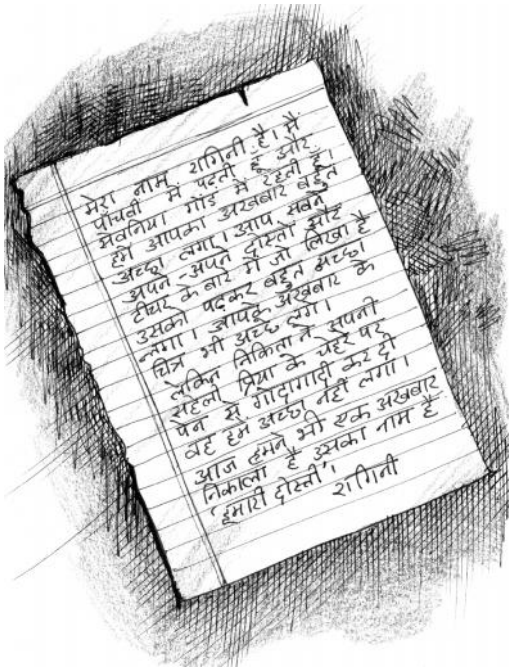

फिर वही अखबार 'दोस्ती भास्कर' उठाया और इसे नयाबसेरा के बच्चों को दिखाया।

इन बच्चों के साथ भी अखबार को लेकर बातचीत हुई और यहाँ के बच्चों ने भी अपना अखबार बनाया 'मेरी टीचर'। मैंने नयाबसेरा के बच्चों से 'दोस्ती भास्कर' के बारे में राय लीं और लौटकर 25वीं बटालियन के बच्चों को सुनाया। अपनी और अपने अखबार की प्रशंसा सुनकर बच्चे खुश तो होते ही हैं, साथ ही उन बच्चों के बारे में जानने की भी उनकी इच्छा होती जो अखबार की तारीफ कर रहे हैं।

एक दिन मैंने 25वीं बटालियन की छात्रा वन्दना उइके से कहा, "क्या तुम 'नयाबसेरा' के बच्चों के लिए एक चिट्ठी लिख सकती हो, जैसे सेवनिया गोंड से रागिनी ने तुम्हारे लिए चिट्ठी लिखी थी?"

वन्दना तो तैयार ही थी। उसने झटपट एक चिट्ठी लिखी और मुझे दे दी। मैंने भी बिना देरी किए नयाबसेरा के बच्चों को वन्दना की चिट्ठी क्लास में पढ़कर सुनाई। नयाबसेरा के बच्चों को पहली बार किसी स्कूल के बच्चे की चिट्ठी मिली थी। उन सभी को वन्दना की चिट्ठी पढ़कर-सुनकर बहुत अच्छा लगा और लगभग हर बच्चे ने चिट्ठी को दो से तीन बार तक पढ़ा।

यह चिट्ठी एक सप्ताह तक बच्चों के बीच घूमती रही। इसके घर से उसके घर, इसके हाथ से उसके हाथ, चिट्ठी का सफर चलता रहा लेकिन चिट्ठी फटी नहीं, सुरक्षित रही।

कुछ दिनों बाद मैंने नयाबसेरा के बच्चों से कहा, "क्या आप में से कोई वन्दना को चिट्ठी का जवाब लिखेगा?"

"हाँ, भैया हम लिखेंगे," के साथ बच्चों ने हाथ ऊपर किए और नयाबसेरा

से सालेहा, शबनम, क्षमा और ज्योति ने वन्दना के नाम चिट्ठी भेज दी...।

इन चिट्ठियों की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि चिट्ठी लिखते समय बच्चों ने यह नहीं पूछा कि क्या लिखना है। कैसे लिखना है। कहाँ से शुरू करें, कहाँ खत्म करें।

जब ये चारों चिट्ठियाँ 25वीं बटालियन पहुँचीं और कक्षा में पढ़कर सुनाई गईं तो बच्चों की खुशी का ठिकाना नहीं था। कक्षा के सब बच्चों ने चिट्ठियाँ पढ़ीं। एक बार, दो बार, बार-बार...!

लेकिन पूरी कक्षा में जो सबसे ज़्यादा खुश थी, वह थी वन्दना। क्योंकि सब चिट्ठियाँ उसी के नाम की जो थीं। बाद में वन्दना ने चारों चिट्ठियाँ अपने पास हिफाज़त से रख लीं। मैंने पूछा, "अब क्या करोगी?" वह बोली, "मम्मी-पापा को दिखाऊँगी।"

शायद ऐसे मौके बहुत ही कम होते हैं जब बच्चे इतने खुश होकर अपनी कोई बात घर वालों को सुनाते या दिखाते हों।

चार दिन बाद मैंने ये चारों चिट्ठियाँ वन्दना से वापस लीं, सेवनिया गोंड से मिली शालिनी की चिट्ठी तलाशी और सब चिट्ठियाँ 25वीं बटालियन की प्राचार्य को दिखाकर अभी तक की कहानी सुनाई।

वे बहुत खुशी से बोलीं, "सचमुच यह एक सराहनीय प्रयास है, बच्चों को भावनात्मक रूप से जोड़ने का और लिखित माहौल देने का भी।"

वन्दना को चिट्ठी मिलने के बाद 25वीं बटालियन के अलग-अलग बच्चों ने चिट्ठी लिखने की शुरुआत की और फिर चिट्ठियों के लेन-देन का एक सिलसिला बन गया।

आम से खास बने बाल अखबार

जब भी मैं बटालियन आता तो नयाबसेरा की 4-5 चिट्ठियाँ मेरे हाथ होतीं और जब नयाबसेरा लौटता तो कुछ नई चिट्ठियाँ पुनः नयाबसेरा जाने के लिए तैयार होतीं।

इन सभी चिट्ठियों के आदान-प्रदान ने दोनों स्कूलों के बच्चों को भावनात्मक रूप से आपस में जोड़ दिया था। अब बच्चे मुझसे अकसर अपने अनजाने दोस्तों के बारे में पूछते रहते, 'वो कैसी है', 'कैसी दिखती है', 'कितनी बड़ी है', 'क्लास में तेज़ है क्या' आदि, इत्यादि। वो अखबार जो कभी आम था, वह अब खास हो गया था। सभी बच्चे उसका विशेष ध्यान रखते, जब भी कोई अखबार के करीब दिखता तो बच्चे बोलते, "दूर से पढ़ो, फाड़ना नहीं।"

अलग-अलग स्कूलों का सफर तय करके बटालियन का अखबार फटने की स्थिति में आ गया था। तब पाँचवीं के बच्चे मेरे पास आए, मुझसे सेलोटेप लिया और अखबार को हर उस जगह से चिपकाया जहाँ से उसके फटने की सम्भावना थी। अब यह अखबार उनका अपना अखबार था और उसे सुरक्षित रखना उनकी अपनी ज़िम्मेवारी। अपनी लिखित रचना की ऐसी हिफाज़त पहली बार ही देखने को मिली और यही तो

मैं भी चाहता था।

इधर चिट्ठियों के लगातार आदान-प्रदान में, मैं हर बार अखबार की चर्चा जुड़वाता रहा और बच्चे चिट्ठियों में अखबार की जानकारी लेते और देते रहे।

एक दिलचस्प घटना

वन्दना ने जब नयाबसेरा के बच्चों को पहली चिट्ठी लिखी तो उसमें लिखा था - "हमने अभी तक कुल तीन अखबार निकाले हैं।"

उसके जवाब में सालेहा खान ने अपनी चिट्ठी में लिखा, "हम आपके अखबार देखना चाहते हैं और पढ़ना भी चाहते हैं। तो आप बताओ हम कब आपके स्कूल में आ जाएँ?"

लगातार चिट्ठियों के द्वारा विचारों के आदान-प्रदान और 25वीं बटालियन के शिक्षकों और प्राचार्य महोदया के सहयोग की बदौलत नयाबसेरा के बच्चों का 25वीं बटालियन आना तय हुआ।

उधर नयाबसेरा के बच्चे 25वीं बटालियन आने के लिए तैयार थे और इधर 25वीं बटालियन के बच्चे ये सोचकर परेशान थे कि उनके पास तो तैयार किया गया एक ही अखबार बचा है और चिट्ठी में तीन अखबार निकले हैं, ऐसा लिखा है।

एक दिन बटालियन के बच्चों ने कहा- "भैया हमारे पास तो एक ही अखबार है और हमने तीन लिखा है।"

मैं - बाकी दो कहाँ गए?

बच्चे - भैया वो तो फट गए।

मैं - तो फिर रहने दो, बोल देना दो फट गए।

बच्चे - नहीं भैया, अखबार तो निकालना ही पड़ेगा।

मैं - तो फिर चलो। अभी निकाल लें, कहकर मैंने बच्चों के साथ 5वीं कक्षा में प्रवेश किया लेकिन...।

आज ही के दिन 'दक्षता संवर्धन' टेस्ट होने की वजह से बाल अखबार नहीं निकाला जा सका। मैंने बच्चों से कहा, "कोई बात नहीं, बोल देंगे फट गया।" बच्चे बोझिल मन से दक्षता टेस्ट में शामिल हो गए।

हर रोज़ की तरह दो बजे छुट्टी

हुई और सभी के साथ मैं भी बाहर निकला। उसी समय 5वीं की लड़कियों का एक समूह मेरे पास आकर बोला, "भैया अखबार निकालना है।"

"अब?" मैंने आश्चर्य से पूछा और अपनी असमर्थता बताते हुए कहा, "अब नहीं बना सकते।"

बच्चों ने कहा, "तो फिर हमको कागज़ दे दो। हम घर से लिखकर लाएँगे और कल चिपका देंगे।" मैंने कहा, "ये हो सकता है।" सभी को कागज़ दे दिए। अगले दिन मेरे पहुँचने से पहले अखबार बनकर तैयार था और दीवार पर भी लगाया जा चुका था। इस अखबार की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि यह अभी तक निकाले गए सभी अखबारों से ज़्यादा सुन्दर और स्पष्ट था!

मिलने की बेताबी

इधर लगातार चिट्ठियों के आदान-प्रदान से बच्चों के बीच आपसी दोस्ताना सम्बन्ध मज़बूत होते जा रहे थे और चिट्ठी लिखने वाले चेहरे एक-दूसरे से मिलने का बेताबी से इन्तज़ार कर रहे थे।

मैंने 25वीं बटालियन की प्राचार्या से इजाज़त ली और नयाबसेरा के बच्चों को लेने पहुँचा। नयाबसेरा पहुँचकर मैंने पाँचवीं कक्षा की क्लास टीचर को बच्चों को 25वीं बटालियन ले जाने सम्बन्धित जानकारी दी। क्लास टीचर का कहना था कि वो कई दिनों के अवकाश के बाद आज ही स्कूल आई हैं और परीक्षाएँ भी इसी माह हैं, सो आज तो वो बच्चों को पढ़ाएँगी। बच्चों को ले जाने के लिए मुझे कोई

और दिन चुनना होगा।

मेरे पास कोई विकल्प नहीं था। मैंने यह जानकारी बच्चों को दी। बच्चों ने कहा कि वो खुद बात करेंगे, और "प्लीज़ मैम, प्लीज़ दीदी, दीदी जाने दो ना" करते हुए आखिर बच्चों ने मैडम को मना ही लिया।

दोपहर के 12:30 बजे करीब एक किलोमीटर का पैदल सफर तय कर नयाबसेरा के बच्चे 25वीं बटालियन पहुँचे।

मैंने बच्चों को कक्षा 1 से लेकर 10वीं तक के बच्चों व कक्षा शिक्षकों से मिलवाया। परन्तु पाँचवीं के बच्चों से नहीं मिलवाया। प्रत्येक कक्षा में शिक्षकों ने मेहमान बच्चों का स्वागत करवाया और कक्षा के बच्चों व कक्षा के बारे में जानकारी दी।

इधर पाँचवीं के बच्चे अपने नए दोस्तों से मिलने का बेसब्री से इन्तज़ार कर रहे थे और आखिरकार जब उन्होंने कक्षा में प्रवेश किया तो तालियाँ बजीं।

बच्चों ने आपस में हाथ मिलाया और साथ बैठकर बातचीत की। अन्त में 25वीं बटालियन की पाँचवीं की क्लास टीचर ने सभी बच्चों के साथ चिट्ठियाँ लिखने वाले बच्चों को धन्यवाद दिया। प्राचार्या ने आकर सभी बच्चों से बात की और आपस में चिट्ठियाँ लिखते रहने की सलाह दी।

दोनों ही स्कूल के बच्चे खुशी से झूम उठे।

महेश झरबड़े: भोपाल स्थित मुस्कान संस्था में काम करते हैं। मुस्कान, बस्तियों में रहने वाले बच्चों के लिए शिक्षा और शिक्षा से जुड़े अन्य मुद्दों जैसे स्वास्थ, रोज़गार आदि पर काम करने वाली संस्था है।

सभी चित्र: सौम्या शुक्ला: स्कूली पढ़ाई पूरी कर रही हैं। भोपाल में निवास।